संस्करण - 2 अंक - 4 अक्टूबर 2022

प्रज्ञाम्बु

cGanga
गंगा नदी घाटी प्रबंधन एवं अध्ययन केंद्र

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर द्वारा संचालित गंगा नदी घाटी प्रबन्धन एवं अध्ययन केंद्र (cGanga) की इस त्रैमासिक पत्रिका का उद्देश्य जल और नदी पुनरुद्धार एवं संरक्षण के प्रबंधन से संबंधित विभिन्न विषयों पर देश-विदेश से उपलब्ध पारंपरिक ज्ञान एवं विज्ञान के समन्वय पर आधारित जानकारी संबंधित संस्थाओं एवं नागरिकों तक पहुचाना है।

परंपरा, विज्ञान, तर्क और हमारी नदियाँ

भारतीय संस्कृति में नदियां जीवन के हर रंग और रस में मनुष्य का साथ निभाती हैं। माहौल उत्सव का हो या शोक का, दोनों ही स्थितियों में मनुष्य नदी के सान्निध्य में पहुंच जाता है। नदियों से हम बहुत कुछ लेते हैं और बदले में ऐसी कई चीजें नदी को अर्पित कर देते हैं, जो कभी ईश्वर के प्रति प्रेम को व्यक्त करने का माध्यम बनी थी – जैसे फूल। त्योहारों के समय नदियों के समीप होने वाले यह क्रियाकलाप सामूहिक रूप से बड़े स्तर पर होने लगते हैं। क्या हमारे त्योहारों का नदियों की निर्मलता से कोई संबंध है? उत्सव मनाने का हमारा तरीका और सलीका नदियों की वर्तमान स्थिति के परिप्रेक्ष्य में कितना प्रासंगिक है? प्रज्ञाम्बु के इस अंक में हमने ऐसे ही सवालों के जवाब तलाशने की कोशिश की है।

बीते डेढ़ दशक में विभिन्न त्योहारों की कुछ परंपराएँ पर्यावरण संरक्षण की कसौटी पर परखी गयी हैं। आधुनिकता और बाजारवाद की चपेट में आए कुछ रिवाज पर्यावरण हितैषी नहीं प्रतीत हुए। पर्यावरण, खासकर नदियों की बात करें तो गणेशोत्सव और नवरात्रि के बाद नदियों में ईश्वर की प्रतिमा विसर्जित करने की परंपरा, मूर्ति के निर्माण में शामिल किये गए अवयवों के दुष्प्रभाव के कारण चर्चा में रही है।

नदियों पर प्रतिमा विसर्जन से प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है लेकिन यह नदियों के प्रदूषण के वृहद कारणों के समक्ष बहुत सूक्ष्म हैं। नदियों के किनारे इन रिवाजों से संबंधित क्रियाकलाप प्रत्यक्ष नजर आने की वजह से इन्हें प्रदूषण का प्रमुख कारण मान लिया जाता है। जिसके चलते कई बार प्रदूषण के वृहद कारकों की ओर से ध्यान हट जाता है। इस तथ्य पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है कि त्योहार और उनसे संबंधित परंपराएं जैसे प्रतिमा विसर्जन वर्ष में एक बार निभाई जाती हैं लेकिन नदी में प्रदूषण की समस्या वर्षपर्यंत रहती है। नदियों में प्रदूषण का वृहद कारण शहरी घरेलू अपशिष्ट और औद्योगिक अपशिष्ट हैं। इन दोनों अपशिष्टों के उपयुक्त निदान के बिना ही नदी में मिल जाना जल तथा नदी प्रदूषण की समस्या का मूल कारण हैं।

त्योहारों के रीति–रिवाजों की वजह से नदी पर होने वाला प्रभाव अन्य वृहद कारकों की तुलना में बहुत कम है किंतु फिर भी हम यहां त्योहारों, उनके रिवाजों, मूल परंपराओं, आधुनिक काल में परंपराओं में आए परिवर्तनों के बारे में बात करेंगे क्योंकि छोटा ही सही यह एक कारक है, जो नदियों को प्रभावित करता है।

> नदियों के किनारे इन रीति–रिवाजों से संबंधित क्रियाकलाप प्रत्यक्ष नजर आने की वजह से इन्हें प्रदूषण का प्रमुख जिम्मेदार मान लिया जाता है। जिसके चलते कई बार प्रदूषण के वृहद कारकों की ओर से ध्यान हट जाता है। त्योहार और उनसे संबंधित परंपराएं जैसे प्रतिमा विसर्जन वर्ष में एक बार निभाई जाती हैं लेकिन नदी में प्रदूषण की समस्या वर्षपर्यन्त रहती है।

दूसरा इस कारक को नियंत्रित करके जनसामान्य प्रशासन के समक्ष उदाहरण प्रस्तुत कर सकते हैं, और अन्य कारकों के लिए जिम्मेदार सभी लोगों पर एक नैतिक दबाव बना सकते हैं कि वे भी नदियों के हित को ध्यान में रखते हुए सही दिशा में कदम उठाएँ।

नदियों में विसर्जन समस्या नहीं है समस्या का असल कारण है मूर्ति बनाने में इस्तेमाल की गई ऐसी अप्राकृतिक सामग्री जो जल में घुलनशील नहीं है और रंग–रोगन में इस्तेमाल किये गए ऐसे रसायन जो अधिक मात्रा में जलस्रोत में पहुंचे तो उसका रासायनिक संतुलन प्रभावित कर सकते हैं। बहरहाल अगर बात सिर्फ गणेशोत्सव की करें तो आमजन ने खुले दिल से उन परिवर्तनों को स्वीकार किया है, जो जलस्रोतों के लिए आवश्यक हैं। आज ज्यादातर श्रद्धालु मिट्टी से बनी गणेश जी की प्रतिमा का घर में ही विसर्जन कर रहे हैं। इसके अलावा विसर्जन के लिए जिला प्रशासन द्वारा तैयार किये गये कृत्रिम विसर्जन कुंड में भी लोग प्रतिमाएं विसर्जित कर रहे हैं ताकि श्रद्धा और भक्ति के साथ किया गया यह विसर्जन प्रकृति के सृजन पर कोई दुष्प्रभाव ना डाले।

महाराष्ट्र समेत सभी राज्यों ने इस दिशा में प्रयास किये हैं जिसे जनता ने भी सहयोग प्रदान किया है। इसी तरह के

प्रयास पश्चिम बंगाल विशेषकर कोलकाता में दुर्गा पूजन के बाद दशहरे के दिन होने वाले दुर्गा प्रतिमाओं के विसर्जन के लिए भी अपनाए गए हैं। कोलकाता में दुर्गा पूजा पंडाल लगवाने वाली समितियों ने पर्यावरण हित की दिशा में एक कदम आगे बढ़कर प्रसाद वितरण में इस्तेमाल किये जाने वाले प्लास्टिक या थर्मोकोल से बने बर्तनों के स्थान पर पत्तों से बनी थालियों और कटोरियों का इस्तेमाल शुरू कर दिया है। इसी तरह कई स्थानों पर पूरा पंडाल ही ऐसी सामग्री से निर्मित किया जा रहा है, जिसका आसानी से अपघटन हो जाए और पर्यावरण पर कोई भी नकारात्मक असर ना हो।

जम्मू में भी तवी नदी के संरक्षण के लिए नवरात्रि के दौरान होने वाले सांख (स्थानीय भाषा में पूजन सामग्री) विसर्जन के दौरान ऐसे ही प्रयास किये जा रहे हैं। जम्मू शहर से होकर गुजरने वाली तवी नदी में नवरात्रि के समापन पर सांख विसर्जित करने की लोकपरंपरा है। पूर्व में सांख में पूजन सामग्री, वस्त्र, फूल विसर्जित किये जाते थे परंतु धीरे–धीरे देवी मां के श्रृंगार में प्लास्टिक से बनी सामग्रियों का प्रयोग भी प्रारंभ हुआ और पूजन सामग्री के साथ लोग प्लास्टिक से बनी सामग्री भी नदी में प्रवाहित करने लगे। जिसे देखकर स्थानीय नागरिक संगठन आगे आए और उन्होंने लोगों से सांख में प्लास्टिक का इस्तेमाल न करने और विसर्जन कुंड में विसर्जन करने की अपील की, जिसे श्रद्धालुओं ने स्वीकारा भी। उम्मीद है कि नदियों और पर्यावरण के हित में जनचेतना इसी तरह बढ़ती रहेगी।

भारतीय संस्कृति में उत्सव, पर्यावरण से हमारा रिश्ता प्रगाढ़ बनाते रहे हैं और आज इन्हीं उत्सवों में बाजारवाद, सर्वश्रेष्ठ दिखाई देने की प्रतिद्वंदिता और दिखावे की प्रवृत्ति के कारण शामिल हुए अवयव उत्सव से संबंधित परंपराओं को सवालों के घेरे में ले आते हैं।

हर उत्सव के पीछे पर्यावरण के किसी एक महत्वपूर्ण घटक को सहेजने का संदेश है। हमारा प्रयास है कि इन परंपराओं की वैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत कर, पुरातन परंपराओं की ओर देखने का तार्किक नजरिया जनसामान्य के समक्ष प्रस्तुत किया जाए। तर्क और विज्ञान को आधार बनाकर हम ऐसी कोशिशें कर सकते हैं, जिनसे न

हमारा प्रयास है कि इन परंपराओं की वैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत कर, पुरातन परंपराओं की ओर देखने का तार्किक नजरिया जनसामान्य के समक्ष प्रस्तुत किया जाए। तर्क और विज्ञान को आधार बनाकर हम ऐसी कोशिशें कर सकते हैं, जिनसे ना केवल मारत बल्कि समूचे विश्व के पर्यावरण विशेषज्ञों का हमारी लोकपरंपराओं की ओर देखने का नजरिया ही बदल जाए।

केवल भारत बल्कि समूचे विश्व के पर्यावरण विशेषज्ञों का हमारी लोकपरंपराओं की ओर देखने का नजरिया ही बदल जाए। हम ऐसे कुछ उदाहरण भी देंगे, जहां आस्था को क्षति पहुंचाएं बगैर, पर्यावरण और समाज दोनों का हित साधा गया।

शुरुआत करते हैं गणेशोत्सव से, भगवान गणेश के पूजन में इस्तेमाल की जाने वाली दूर्वा (एक किस्म की घास) धार्मिक दृष्टिकोण के साथ–साथ पर्यावरण के लिए भी बहुत महत्वपूर्ण है। घास के मैदान जल–चक्र के महत्वपूर्ण भागीदार हैं, वे मृदा में नमी बनाए रखते हैं और सतह जल और नदी की धारा के बीच संबंध की एक महत्वपूर्ण कड़ी होते हैं। मृदा के कटाव को रोकते हैं, जल प्रवाह के नियंत्रण में भागीदारी करते हैं, जलवायु शमन (क्लाईमेट मिटीगेशन) में भी घास के मैदानों की महती भूमिका होती है।

घास के मैदानों का परितंत्र पर्यावरण और जैवतंत्र दोनों के लिए अति महत्वपूर्ण है परंतु दुर्भाग्यवश यह परितंत्र भी हमारी उपेक्षा का शिकार हुआ है। देश में घास के मैदान घट रहे हैं। शहरों के विस्तार, भूमि उपयोग में बदलाव, वनों के कटाव जैसे कारणों के चलते घास के मैदान लगातार सिकुड़ रहे हैं। हम लोगों में से ज्यादातर लोग दूर्वा को खरीदकर, धार्मिक विधियां सम्पन्न करते हैं और अपने घर की बॉलकनी में प्लास्टिक की घास बिछाकर घर को हरा–भरा बनाकर रखते हैं। हमारे शहर या कस्बे से चंद किलोमीटर दूर स्थित हरी–भरी पहाड़ी आज सूख गई है या नजदीक के जंगल में क्या बदलाव आ रहे हैं, न हम उन्हें पहचान पाते हैं, न ही पहचानने पर किसी किस्म की सतर्कता या सक्रियता दिखाते हैं। मामूली से दिखने वाली घास असल में जलस्रोतों की सम्पन्नता के सोपान का आधारस्तंभ है।

घास के मैदानों के क्षेत्रफल में आई गिरावट ने चीन की नदियों पर प्रतिकूल प्रभाव डाला। दुनिया के कई देश अब जलचक्र में घास के महत्व को समझते हुए इन्हें सहेजने का प्रयास कर रहे हैं। चीन की यांग–सी नदी जो कि एशिया की सबसे लंबी नदी मानी जाती है, घास के मैदानों के क्षेत्रफल में आई गिरावट की वजह से समस्याओं का शिकार होने लगी है। जिसके चलते चीन लगातार इन मैदानों के क्षेत्रफल में वृद्धि करने के प्रयासों में जुटा है। आज हमें भी जरूरत है, भारत की भूमि पर घास के परितंत्रों की स्थिति का विश्लेषण करने की और इन मैदानों पर बसे परितंत्रों को पुनर्स्थापित करने की। भारत में गंगा समेत ब्रह्मपुत्र, नर्मदा और कावेरी के बेसिन में घास के मैदानों के परितंत्र है, जो स्थानीय लोगों की कई आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं और स्थानीय जीव–जंतुओं का पोषण करते हैं।

ऑस्ट्रेलिया में मरे–डॉर्लिंग नदी घाटी क्षेत्र में वृक्षरहित घास के मैदान थे, समय के साथ–साथ ये मैदान भी अलग–अलग कारणों से सिकुड़ते गए, जिसका असर समूचे बेसिन और नदी की मुख्यधारा पर नजर आने लगा। दरअसल ऑस्ट्रेलिया के घास के मैदान वृक्षविहीन घास के मैदान थे, व्यवसायिक कारणों से इन मैदानों को कृषि भूमि में परिवर्तित किया गया। कृषि के लिए नदियों से अत्यधिक जल का दोहन भी किया गया, जिससे अंततः नदी का स्वास्थ्य प्रभावित होने लगा। जिसे देखते हुए 2012 से ऑस्ट्रेलियन सरकार ने मरे–डॉर्लिंग नदी घाटी क्षेत्र के घास के मैदानों को संकटग्रस्त परितंत्र घोषित करते हुए, इनके संरक्षण के प्रयास प्रारंभ किये। जो आज तक जारी हैं और इन प्रयासों में नदी घाटी क्षेत्र में बसा कृषक समुदाय भी भागीदारी दर्ज कर रहा है और किसान अपने खेतों के ईर्द–गिर्द इन घास के मैदानों को सहेज रहे हैं।

यदि गणेशोत्सव से जुड़ी इस परंपरा

को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखें तो कह सकते हैं कि पूजन में दूर्वा का उपयोग एक संकेत हैं, हमारे जीवन में घास के महत्व को समझाने का। गणेशोत्सव के बाद नवरात्रि और नवरात्रि के समापन पर देशभर में दशहरा मनाते हैं। दशहरे पर नीलकंठ नामक पक्षी के दर्शन को सौभाग्यदायक माना जाता है। दरअसल यह पक्षी भी हमारे समूचे परितंत्र के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह कीड़ों के भक्षण पर जीवित रहता है। इसकी मौजूदगी सुस्थिर खेती (सस्टेनेबल एग्रीकल्चर) का प्रमाण है। नदियों को जीवित रखने के लिए आज हर ओर से सुस्थिर खेती को अपनाने की बात की जा रही है। आज नीलकंठ आसानी से दिखाई नहीं देता है, यही वह समय है जब हमें अपने पूर्वजों के सबक को याद करके सोचना चाहिए कि नीलकंठ की घटती आबादी कहीं हमारे घटते हुए सौभाग्य का सूचक तो नहीं?

अंत में देश के सबसे बड़े त्योहार दीपावली के बारे में बात करेंगे। दीपावली पर लक्ष्मीपूजन किया जाता है और देवी लक्ष्मी को कमल के फूल अर्पित किये जाते हैं। कमल के बारे में कहावत है कि वो कीचड़ में खिलता है, इसे पंकज भी कहा जाता है अर्थात पंक में खिलने वाला फूल। प्राकृतिक रूप से कमल झीलों के नजदीक ठहरे हुए पानी में, धीमी गति से बहने वाली नदियों में, नदियों के डेल्टा, तालाबों आदि में खिलता है। खूबसूरत दिखने वाला कमल हमारे जलस्रोतों का सफाईकर्मी है। यह जलस्रोतों तक पहुंची नाइट्रोजन के डीनाइट्रीफिकेशन को बढ़ावा देता है, यह प्रक्रिया इसकी जड़ों के आस–पास पूर्ण होती है। इस तरह जलस्रोतों में नाइट्रोजन का संतुलन कायम करता है। इतना ही नहीं कमल का पौधा पानी में व्याप्त भारी धातुओं जैसे आर्सेनिक, कैडमियम, कॉपर के प्रदूषण को भी अपने में समा लेता है और इन तत्वों के पुनः उपयोग में अपनी भूमिका निभाता है। इसकी चौड़ी पत्तियां सूर्य के प्रकाश को पानी की सतह से नीचे नहीं जाने देती, इस तरह यह पत्तियां जलस्रोत

खूबसूरत दिखने वाला कमल हमारे जलस्रोतों का सफाईकर्मी है। यह जलस्रोतों तक पहुंची नाइट्रोजन के डीनाइट्रीफिकेशन को बढ़ावा देता है, यह प्रक्रिया इसकी जड़ों के आस–पास पूर्ण होती है। इस तरह जलस्रोतों में नाइट्रोजन का संतुलन कायम करता है। इतना ही नहीं कमल का पौधा पानी में व्याप्त भारी धातुओं जैसे आर्सेनिक, कैडमियम, कॉपर के प्रदूषण को भी अपने में समा लेता है और इन तत्वों के पुनः उपयोग में अपनी भूमिका निभाता है। इसकी चौड़ी पत्तियां सूर्य के प्रकाश को पानी की सतह से नीचे नहीं जाने देती, इस तरह यह पत्तियां जलस्रोत में शैवाल (काई) की वृद्धि को रोकती है।

चलिए इन त्योहारों पर नदियों को दे खुशियाँ

हमारे त्योहार हमारे घर परिवार के साथ नदियों के परिवार, जल परिवार के लिए भी खुशियाँ ला सकते हैं। अगर हम उत्सव मनाने की आदतों में कुछ बातें और जोड़ ले।

गणेशोत्सव और दुर्गापूजा दो ऐसे आयोजन हैं, जहां बड़ी संख्या में लोग एकत्रित होते हैं। हम सांस्कृतिक, सामाजिक आयोजन करने वाली संस्थाओं से अपील करते हैं कि वे इन उत्सवों में एक कार्यक्रम अपने शहर की किसी नदी को केंद्र में रखकर करे और नदी से संबंधित गतिविधियां आयोजित करे। शहर में नदी प्रबंधन समिति बनाने और यदि समिति अस्तित्व में हैं तो उसके सदस्यों को आमजन से मिलवाने के लिए यह उत्सव उपयुक्त मंच प्रदान कर सकते हैं।

हम दीपावली पर अपने–अपने घर की सफाई करते हैं तो क्यों ना इस दीवाली अपने शहर से होकर या शहर के नजदीक से होकर गुजरने वाली किसी नदी के घाटों का रूख करे। अकेले नहीं, समूह में और देखे कही इन घाटों पर प्लास्टिक का ढ़ेर तो नहीं जमा है। याद रखिए यदि आपके नजदीक से गुजरने वाली नदी साफ होगी तो आपके घर, भूमि, खेत, बाग का मूल्य बढ़ेगा ।

कार्तिक पूर्णिमा पर यदि नदी में दीपदान करने जाते हैं तो सुनिश्चित करे कि दीपक प्राकृतिक सामग्री से बना हो, प्लास्टिक के दोने में रखा गया दीपक देर तक आपकी नजरों के सामने रहता है लेकिन अंततरू नदी और उसके जीव–जंतुओं को तकलीफ देता है।

कार्तिक पूर्णिमा और मकर संक्राति पर बड़ी तादाद में लोग पवित्र नदियों में स्नान के लिए पहुंचते हैं, ऐसे अवसरों पर नदी के किनारे वस्त्र या जूते–चप्पल त्यागकर ना जाए। पुराणों में भी इस किस्म की गतिविधियां ना करने के निर्देश हैं। यदि आप इन चीजों को दान ही देना चाहते हैं तो किसी सामाजिक संस्था में दीजिए या जरूरतमंद व्यक्ति को दीजिए, नदी किनारे भीड़ में छोड़े गए जूते–चप्पल और वस्त्र किसी काम के नहीं रह जाते और अंततरू कचरे में तब्दील हो जाते हैं।

वार्षिकोत्सव में भी करें सम्मिलित

नवंबर से जनवरी के दरम्यान देशभर के स्कूल कॉलेजों में वार्षिकोत्सव मनाया जाएगा। स्कूल और कॉलेज की वार्षिकोत्सव संबंधित गतिविधियों में भी स्थानीय नदियों से संबंधित गतिविधियों को शामिल किया जा सकता हैं जैसे छोटे बच्चों के लिए मेरे शहर की नदी विषय पर चित्रकला प्रतियोगिता, वरिष्ठ वर्ग के लिए फोटोग्राफी या कविता प्रतियोगिता। लोकगीतों में भी नदियों पर कई गीत हैं लेकिन इन गीतों का ना तो दस्तावेजीकरण हुआ हैं और ना ही कोई डिजिटल संग्रह बना है। ऐसे में यदि कलाजगत से संबंधित लोग नदियों से जुड़े गीतों पर काम करे तो लोकसंगीत की हमारी विरासत लुप्त होने से बच जाएगी।

में शैवाल (काई) की वृद्धि को रोकती हैं। इस दीपावली पर कोशिश कीजिए कमल को उगाने वालों को प्रोत्साहित करने की क्योंकि वे लोग अपनी आजीविका चलाने के साथ हमारे जलस्रोत और जैव विविधता को सहेज रहे हैं।

आधुनिक विकास, औद्योगीकरण और शहरीकरण के चलते हमारी नदियों के सामने कई समस्याएं और चुनौतियां खड़ी हैं। ऐसे में यदि पुरातन परंपराओं को भली प्रकार से समझे बगैर हम नदियों को भेंट के रूप में भौतिक उपहार देंगे या अप्राकृतिक सामग्री से तैयार उत्पादों को विघटन की उम्मीद से नदियों में समर्पित कर देंगे तो हम इन समस्याओं में इजाफा ही करेंगे। इन समस्याओं से उबरने का रास्ता ज्ञानार्जन ही है। पौराणिक संदर्भों की समुचित व्याख्या और उनका तार्किक विश्लेषण हमें इन गलतियों को दोहराने से रोक सकता है।

भारत के बहुसंख्यक समुदाय की विविध परंपराओं में कहीं दूर्वा तो कहीं वटवृक्ष का महत्व है। कहीं कमल तो कहीं गुड़हल का महत्व है। सिर्फ खूबसूरत फूल ही नहीं धतूरे और अकौड़े के पौधे और पुष्पों का भी महत्व है। यह सूची बहुत लंबी है। संभवतया प्रकृति के इन घटकों को समय–समय पर हमारे जीवन के ताने–बाने में इसलिए बुना गया होगा ताकि हम प्रकृति के हर घटक का महत्व समझ सकें। वर्तमान में हमारे द्वारा इनकी ओर देखने का दृष्टिकोण और विवेकपूर्ण फैसले तय करेंगे कि हमारी प्राकृतिक संपदा का भावी स्वरूप कैसा होगा।

जीवन को महका रहे हैं पुराने फूल

फूल मनुष्य के जीवन को महक और रंगों से हसीन बनाते ही हैं लेकिन आईआईटी कानपुर के नेतृत्व में प्रारंभ हुआ एक स्टार्टअप 'फूल' पुराने और पूजा में इस्तेमाल किये जा चुके फूलों से कई उत्पाद बना रहा है। जिससे कि कई टन फूल जो अब तक नदियों में पहुंच जाते थे, वहां ना पहुंचकर खुशबूदार वस्तुओं में तब्दील होकर बाजार और घर तक पहुंच रहे हैं। यह संस्था रोजाना 8.4 टन फूल (जिनका उपयोग हो चुका है) उत्तरप्रदेश के धार्मिक स्थलों से लेती हैं। बाद में इन फूलों से अगरबत्ती, धूपबत्ती, इत्र, पैकेजिंग मटैरियल आदि तैयार किये जाते हैं। इस समूची प्रक्रिया में कई ग्रामीण महिलाओं को रोजगार मिलता है और सबसे बड़ी बात इतनी बड़ी तादाद में ठोस अपशिष्ट को नदियों में प्रवाहित होने से पहले रोक लिया जाता है। इसी तरह इस्तेमाल किये जा चुके फूलों से हूबहू चमड़े की तरह नजर आने वाला उत्पाद भी तैयार किया गया है।

हर घर जागृत

नदियां और पर्यावरण हमारी सामूहिक संपत्ति हैं और सामूहिक उत्तरदायित्व भी। सामूहिक उत्सवों और परंपराओं की निगरानी और उनमें परिवर्तन संभव है किंतु हमारी रोजमर्रा की जिंदगी में भी ऐसी कई गतिविधियाँ होती हैं, जिनमें इस्तेमाल की गई सामग्री को हम घर के कचरे के साथ नहीं रख सकते हैं, न ही उन्हें स्थाई रूप से घर में रखा जा सकता है उदाहरण के तौर पर पूजा में इस्तेमाल किये गए फूल, पत्तियां। इन सामग्रियों को यदि हम घर के बगीचे की मिट्टी में ही मिला देंगे तो मिट्टी की उर्वरकता भी बढ़ेगी और अगली बार किसी रस्म को निभाने के लिए हम दोबारा उस मिट्टी का प्रयोग कर सकेंगे। ऐसे प्रयास हम तलमंजिल के घरों में बगीचे में और फ्लैट में किसी गमले में कर सकते हैं।

और अंत में...

लियो टॉल्सटॉय के एक कथन के अनुसार प्रसन्नता की पहली शर्तों में से एक है कि मनुष्य और प्रकृति के बीच का संबंध नहीं टूटना चाहिए। त्योहार हमारी प्रसन्नता के प्रतीक हैं और आईये हम साथ मिलकर कोशिश करें कि त्योहार प्रकृति के साथ हमारे संबंधों को मजबूती दें। मनुष्य, समाज और प्रकृति के बीच बेहतर संबंधों और संतुलित समीकरणों की बहाली के लिए आवश्यक है ज्ञानार्जन। उम्मीद है कि त्योहारों की रोशनी के बीच हमारे पाठक अपने परिवेश के प्रति ज्ञान और सतर्कता में वृद्धि करेंगे।

पुराणों में वर्णित है, नदियों का संरक्षण

आज नदियों की हालत देखकर यदि स्थानीय प्रशासन कुछ परंपराओं में बदलाव की अपील कर रहा है तो जनसामान्य को यह नहीं समझना चाहिए कि उन पर कोई प्रतिबंध थोपा जा रहा है। दरअसल हमें नदी के समीप कैसा व्यवहार करना चाहिए, इसकी शिक्षा हमारे पूर्वज हमें बहुत वर्ष पहले ब्रह्मांडपुराण में बता गए थे। उन्हीं शिक्षाओं को एक श्लोक में संकलित किया गया है। जो इस प्रकार है:

गंगा पुण्यजलां प्राप्य चतुर्दश विवर्जयेत् ।
शौचमाचमनं केशं निर्माल्यं मलघर्षणम् ।
गात्रसंवाहनमं क्रीड़ां प्रतिग्रहमथोरतिम् ।
अन्यतीर्थरतिचैवः अन्यतीर्थ प्रशंसनम् ।
वस्त्रत्यागमथाघातं सन्तारंच विशेषतः ।।

उक्त श्लोक में गंगा नदी के किनारे निम्नलिखित 14 गतिविधियों को प्रतिबंधित बताया गया है: 1 शौचत्याग, 2 गरारे करना 3 बालों को धोना 4 उपयोग की गई पूजा सामग्री को नदी में डालना 5 शरीर की गंदगी को रगड़कर बहाना 6 मानव या पशुओं के शव को नदी में बहाना 7 किसी भी प्रकार की क्रीडाएं करना 8 दान स्वीकारना 9 अमर्यादित आचरण करना 10 किसी अन्य स्थल को नदी किनारे से बेहतर करार देना 11 किसी अन्य स्थल की नदी किनारे से तुलना करना 12 वस्त्र त्याग देना 13 किसी जीव को परेशान करना और 14 शोर मचाना। संभवतया यहां गंगा का पर्याय नदियां है। हम यदि अपनी नदियों का इस तरह से ख्याल रखेंगे तो नदियां सदैव निर्मल बहेंगी।

संपर्क
गंगा नदी घाटी प्रबंधन एवं अध्ययन केंद्र (cGanga)
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर 208016, उत्तर प्रदेश, भारत
Email: info@cganga.org, Website: www.cganga.org, Contact us: +91 512 259 7792
©cGanga, 2021